मै रोज सुबह जब कोई हिंदी का समाचार पत्र पढ़ता हूं, तो रोज मरता हूं’

पत्रकारिता एवं भाषा के बीच का परस्पर संबंध हमेशा से ही विमर्श का विषय रहा है। हिंदी भाषा की पत्रकारिता का मूल्यांकन कालखंडों के परिप्रेक्ष्य में मूलतया तीन बिन्दुओं पर किया जा सकता है। वो तीन बिंदु हैं, पत्रकारिता का भाषाई स्वरुप कैसा था, वर्तमान में कैसा है एवं इसका भावी भाषाई स्वरुप कैसा हो सकता है।

हिंदी पत्रकारिता के इतिहास पर नजर डालें तो इसकी शुरुआत लगभग 1 सौ 90 वर्ष पूर्व सन 1826 में होने के प्रमाण मिलते हैं। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि 30 मई 1826 को पं. युगुल किशोर शर्मा ने हिंदी के प्रथम समाचार-पत्र के रूप में ‘उदन्त-मार्तण्ड’ नाम से समाचार-पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया था। ‘उदन्त-मार्तण्ड’ पूर्ण हिंदी समाचार-पत्र था, जिसमे भाषाई मानको को ख़ास तरजीह दी गयी थी। इसमें कोई शक नही कि तत्कालीन चुनौतियों के बीच हिंदी पत्रकारिता की दिशा में हुई इस शुरुआत ने एक मजबूत नींव रखने का काम किया था। उदन्त-मार्तण्ड से हुई हिंदी पत्रकारिता की इस शुरुआत ने इन 190 वर्षों में कई पैमानों पर क्रमिक व स्वाभाविक बदलाव को स्वीकार किया है। भाषाई संदर्भ में हिंदी पत्रकारिता का मूल्यांकन करने पर यहां ‘क्रमिक विकास’ की बजाय ‘क्रमिक-बदलाव’ शब्द ही ज्यादा प्रासंगिक प्रतीत होता है। बेशक, संसाधनों एवं तकनीक के मोर्चे पर हिंदी पत्रकारिता ने संतोषजनक विकास किया है, लेकिन भाषाई मापदंडों पर हुए परिवर्तनों को विकास का नाम देना उचित नहीं प्रतीत होता है।

पत्रकारिता के मध्यकाल अर्थात बीसवीं सदी के शुरुआती दौर की अगर बात करें तो पत्रकारिता को गांधी के रूप में एक सशक्त पत्रकार प्राप्त होता है। गांधी 20वी सदी के शुरू में पत्रकार बन गये थे। उन्होंने पत्रकारिता के भाषाई मापदंडों को भी पत्रकारीय मूल्यों के अनुरूप विशुद्ध बनाये रखा। चाहें गुजराती भाषा की पत्रिका हो अथवा अंग्रेजी या हिंदी भाषा की पत्रकारिता हो, गांधी ने भाषाई मापदंडों का हमेशा ख्याल रखा था। भाषाई पत्रकारिता की यह जीवटता गांधी में ही थी कि अफ्रीका की विषम परिस्थितियों में रहते हुए गांधी ने पांच भारतीय भाषाओं में ‘इन्डियन ओपिनियन’ का सम्पादन किया। वो पत्रकारिता की चुनौतियों का दौर था, और तब पत्रकारिता में व्यावसायिकता और सुविधाभोग की प्रवृति का जन्म नही हुआ था। उस दौर में पत्रकारिता का उद्देश्य सिर्फ सरोकार था। लेकिन आजादी के बाद पत्रकारिता के क्षेत्र में, खासकर हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में भाषाई मानदंडों का जिस ढंग से छय हुआ है, वो कहीं न कहीं बेहद कष्टदायी एवं चिंताजनक है।

आजादी के बाद पत्रकारिता के क्षेत्र में मूलतया दो स्तरों पर बदलावों को देखा गया है। पहला, माध्यमों

का विस्तार एवं दूसरा समानांतर रूप से भाषाई अवमूल्यन। प्रिंट माध्यम से निकलकर जब पत्रकारिता ने टीवी की दुनिया में जगह बनाने की शुरुआत की, तो कहीं न कहीं सूचनाओं के सम्प्रेषण में तीव्रता की प्रत्याशा समाचार-प्रदाता एवं समाचार-श्रोता दोनों में बढ़ने लगी। लिहाजा, भाषाई मानदंडों से समझौता होना स्वाभाविक था। इस मामले में रही सही कसर नब्बे के दशक में हुए मीडिया के निजीकरण ने पूरा कर दिया। दरअसल प्रिंट मीडिया तो पहले ही निजी हाथों में था, अब टीवी की बारी थी।

नब्बे के दशक में हिंदी के कई समाचार-चैनल शुरू हुए और अब तो इनकी संख्या सैकड़ों में है। सबसे तेज और सबसे आगे जैसे जुमलों के साथ पत्रकारिता करने की होड़ ने पत्रकारिता के मूल्यों का क्षरण किया, जिसमे सबसे ज्यादा नुकसान हिंदी भाषा का हुआ। आज की तारीख में अगर तथ्यों की बुनियाद पर आप बात करें तो लगभग 95 फीसद हिंदी के चौबीस घंटे वाले समाचार चैनल ऐसे हैं, जिनका नाम तक हिंदी में नहीं है। हिंदी समाचार चैनलों का नाम अंग्रेजी में होना, खुद ही एक विरोधाभाष है। हालांकि इसकी शुरुआत प्रिंट में पहले ही हो गयी थी, जब टाइम्स समूह ने अपने हिंदी संस्करण के अखबार का नाम अंग्रेजी में दिया था।

आज की तारीख में समाचार के प्रिंट और टीवी माध्यमों में गिरते हिंदी के भाषाई स्तर का अंदाजा सहज दस मिनट तक का कोई एक हिंदी प्रसारण देखकर लगाया जा सकता है। यह सवाल हिंदी पत्रकारिता में गाहे-बगाहे उठता रहा है कि अगर अंग्रेजी समाचार चैनल के समाचार-वाचक द्वारा पढ़े जा रहे आधे घंटे के कार्यक्रम में हिंदी का शब्द 5 फीसद भी नहीं होता, तो आखिर वो कौन सी मजबूरी है कि हिंदी समाचार चैनल के वाचक के आधे घंटे के कार्यक्रम में लगभग 40 फीसद शब्द अंग्रेजी के ही होते हैं!

पत्रकारिता में भाषाई गिरावट पर एक संगोष्ठी में बोलते हुए वरिष्ठ पत्रकार राहुल देव कहते हैं, 'मै रोज सुबह जब कोई हिंदी का समाचार-पत्र पढ़ता हूं तो रोज मरता हूं। मुझे निराशा होती है। हम भाषा को कहां लेकर जा रहे हैं, इसकी घोर चिंता होती है। यह समस्या भाषाई स्तर पर एक गंभीर समस्या है। यहां वरिष्ठ पत्रकार राहुल देव की बातों से सहजता से सहमत हुआ जा सकता है। यह समस्या सबसे ज्यादा हिंदी पत्रकारिता में है। साथ ही चिंता इस बात के प्रति भी है, बदलाव के इस क्रम में यह समस्या और गंभीर होती जा रही है।

चूंकि समय के साथ-साथ पत्रकारिता के माध्यम में भी बदलाव होता रहा है। बदलाव के इसी क्रम में इक्कसवीं सदी की शुरुआत में ही वेब-मीडिया का सबसे त्वरित और पारदर्शी पत्रकारिता माध्यम सामने आया। वेब मीडिया के प्रादुर्भाव एवं तकनीक के समानांतर विकास ने कलम को कीबोर्ड आश्रित बना दिया। अब कलम सिर्फ जुमलों की बात रह गयी है। वेब मीडिया का प्रसार इतना तीव्र और व्यापक हुआ कि महज एक दशक में ही शेष दोनों ही मीडिया इस पर आश्रित होते गए। आज चाहें टीवी माध्यम हो अथवा प्रिंट माध्यम हो, दोनों ने ही इस नए माध्यम को स्वीकार किया है। हालांकि वेब माध्यम के इस इजाद ने बेशक अभिव्यक्ति को अत्यधिक सहज एवं सर्वसुलभ बनाने का काम किया है, लेकिन भाषाई मानदंडों पर हिंदी के साथ इस माध्यम में कई स्तरों पर ज्यादती हुई है। पत्रकारिता के इस मोर्चे ने तो हिंदी भाषा के साथ-साथ हिंदी की सबसे निकटस्थ देवनागरी लिपि को भी नुकसान पहुंचाया है। वेब मीडिया पर कीबोर्ड संस्कृति की इस पत्रकारिता का प्रभाव अथवा कुप्रभाव ही कहेंगे कि यह बहस अब ज्यादा मुखर होकर आने लगी है कि 'हिंदी को अगर रोमन में लिखा जाय तो सूचना का प्रसार ज्यादा होगा।; हालांकि इस विमर्श को स्तरीय स्वीकृति नही मिल सकी है, बावजूद इसके असगर वजाहत एवं चेतन भगत सरीखे लेखक इस विमर्श के अगुआ रहे हैं।
ऐसे में सवाल ये उठता है कि परम्परागत रूप से चलती आ रही हिंदी पत्रकारिता का वर्तमान स्वरुप हिंदी के भाषाई मूल्यों के लिहाज से क्यों खतरनाक न माना जाय? दरअसल, कई भाषाओं के बीच शब्दों का आयात एवं निर्यात एक जरुरी प्रक्रिया है। मगर हिंदी के सदर्भ में शब्दों के आयात एवं निर्यात के बीच एक चिंताजनक असंतुलन है। हमे हिंदी पत्रकारिता के संदर्भ इस बात का ख्याल तो रखना ही होगा कि जिस अनुपात में गैर-जरुरी अंग्रेजी शब्दों का आयात किया गया है, वो एक असंतुलित व गैर-जरुरी आयात है। हमे ये भी देखना होगा कि आयात के अनुपात में क्या शब्दों का निर्यात भी हिंदी ने अंग्रेजी में किया है? हालांकि इसका जवाब नही में आएगा।

वैसे, एक तथ्य और भी गौर करने वाला है कि ऐसा नही है कि अंग्रेजी शब्दों के गैर-जरुरी इस्तेमाल के बिना न तो पत्रकारिता सम्भव है और न ही सहज है। उदाहरण के तौर पर अगर देखा जाय तो तमाम पत्र-पत्रिकाएं आज भी हैं, जिन्होंने भाषाई मानदंडों में हिंदी की गरिमा का ख्याल रखा है। मसलन, आध्यात्मिक पत्रिका अखंड ज्योति, कथादेश, परिकथा इत्यादि। लेकिन इन पत्रिकाओं को मुख्यधारा की पत्रकारिता का हिस्सा नहीं माना जा सकता है।

अब सवाल ये भी है कि जिस दिशा में भारतीय पत्रकारिता में हिंदी का भाषाई अवमूल्यन हो रहा है, ऐसे में भाषाई मापदंडों पर पत्रकारिता का भविष्य क्या होगा? निश्चित तौर पर मुख्यधारा की पत्रकारिता में भाषाई स्तर की गिरावट इस बात का संकेत है कि आगामी दशक पत्रकारिता में हिंदी के अस्तित्व के लिहाज से बेहद चिंताजनक है। हालांकि हिंदी पत्रकारिता के भविष्य एवं वर्तमान पर सबसे ज्यादा विमर्श इसके विचार पक्ष को लेकर होता रहा है। लेकिन हिंदी पत्रकारिता के गिरते हिंदी के स्तर को लेकर बहस न के बराबर हुई है। इस लिहाज से यह अपने आप में चिंता जनक बात है कि कहीं ऐसा तो नहीं कि हिंदी खेमे के बुद्धिजीवी भी हिंदी पत्रकारिता में बढ़ते अंग्रेजी शब्दों के हस्तक्षेप एवं गिरते भाषाई स्तर को लेकर मौन स्वीकृति दे चुके हैं! अगर वाकई ऐसा है, तो यह न सिर्फ पत्रकारिता के लिहाज से बल्कि हिंदी के अपने भविष्य के लिहाज से एक घातक स्वीकृति है। चूंकि समाचार पत्र अथवा टीवी समाचार आम जनमानस से प्रत्यक्ष रूबरू होते हैं और उनका सीधा प्रभाव जनता के मानस पटल

पर पड़ता है। लिहाजा अगर हिंदी समाचार पत्र अथवा चैनल ही हिंदी के भाषाई मानकों का ख्याल नहीं रखेंगे तो भला आने वाली पीढ़ी की हिंदी के भाषाई बोध को लेकर कैसे आश्वस्त हुआ जा सकता है ?